

विदेशों में भी हिंदी के रोजगार क्षेत्र लगातार विस्तृत हो रहे हैं। अमेरिका, कनाडा, यूरोप, ऑस्ट्रेलिया, खाड़ी देशों और एशियाई देशों में हिंदी शिक्षक, अनुवादक, इंटरप्रेटर, अंतरराष्ट्रीय मीडिया संवाददाता, संस्कृति-प्रचार विशेषज्ञ, पर्यटन-मार्गदर्शक, आईटी व कंटेंट इंडस्ट्री के हिंदी लेखक तथा भारतीय दूतावासों में भाषा-विशेषज्ञ के रूप में उल्लेखनीय अवसर उपलब्ध हैं। वैश्विक कंपनियों में ग्राहक-सेवा, लोकलाइजेशन, गेमिंग, AI ट्रेनिंग, कंटेंट मॉडरेशन और डेटा एनोटेशन जैसे क्षेत्रों में हिंदी भाषा का रोजगार तेजी से बढ़ा है। डिजिटल क्रांति ने यह सिद्ध कर दिया है कि हिंदी जानने वाला युवा न केवल भारत में, बल्कि पूरी दुनिया में अपने कौशल से नई ऊँचाइयों को छू सकता है

### दार्शनिक विमर्श

भाषा मनुष्य की आंतरिक चेतना का विस्तार है। स्वामी विवेकानंद कहते हैं: "जिस राष्ट्र को अपनी भाषा पर गर्व नहीं, वह राष्ट्र लंबे समय तक टिक नहीं सकता।" गांधीजी ने हिंदी को जन-चेतना की भाषा कहा था, तो रामधारी सिंह 'दिनकर' ने इसे राष्ट्र की आत्मा बताया। हिंदी के प्रति तिरस्कार-भाव वस्तुतः भाषा का नहीं, बल्कि स्व के विरुद्ध तिरस्कार का रूप है। यह मनुष्य को अपनी सांस्कृतिक जड़ों से काटकर उसे मानसिक रूप से पराधीन बनाता है। भाषा-सम्मान केवल भाषिक प्रश्न नहीं, बल्कि आत्म-सम्मान का दार्शनिक प्रश्न है। हिन्दी सम्मान का अर्थ अपनी पहचान, अपने ज्ञान, अपने अस्तित्व और अपनी सभ्यता का सम्मान।

**निष्कर्ष-** हिंदी के प्रति तिरस्कार-भाव भारतीय समाज में गहरी ऐतिहासिक और मानसिक जड़ें रखता है। औपनिवेशिक प्रभाव, शिक्षा-प्रणाली, शहरी अभिजात मानसिकता, मीडिया और सामाजिक हीनता इसकी प्रमुख वजहें हैं। इसके परिणाम सामाजिक विभाजन, सांस्कृतिक विच्छेदन, ज्ञान-अवरोध और आर्थिक असमानता के रूप में सामने आए हैं। समाधान के रूप में हिंदी आधारित शिक्षा-प्रणाली, सामाजिक जागरूकता, सांस्कृतिक पुनर्चेतना, प्रशासनिक विस्तार और वैज्ञानिक सामग्री का विकास अत्यंत आवश्यक है। भाषा-हीनता से बाहर निकलकर हिंदी को आत्मविश्वास, गौरव और समृद्धि की दृष्टि से देखने की आवश्यकता है।

हिंदी का सम्मान एक भाषा का नहीं पूरे भारतीय समाज की सामूहिक आत्मा का सम्मान है।

\*\*\*\*\*

### संदर्भ :-

- Chandrabarti, A. (2015). Colonialism and Indian languages. New Delhi: Sage Publications.
- Dalmia, V. (2017). The Nationalization of Hindu Traditions. University of California Press.
- Kumar, K. (2012). Education and Modernity in India. Oxford University Press.
- Nehru, J. (2012). The Discovery of India. Penguin Books.
- Nussbaum, M. (2011). Creating capabilities: The human development approach. Harvard University Press.
- Pollock, S. (2006). The Language of the Gods in the World of Men. University of California Press.
- Rai, A. (2000). Hindi Nationalism. Orient Blackswan.
- Sharma, B. (2018). Language, identity and culture in Indian society. Journal of Indian Culture Studies, 14(2), 45-57.
- Singh, R. (2015). Sociolinguistics of Hindi. Routledge.
- Vivekananda, S. (2019). Complete works of Swami Vivekananda. Advaita Ashrama.
- Das, K. (1968). The English-Language Elite in India.
- Kachru, B. (2006). The English Language in South Asia.
- King, R. D. (1997). Nehru and the Language Politics of India.
- Nehru, J. (1949). Constituent Assembly Debates on Language Policy.
- Rai, A. (2000). Hindi Nationalism.

## दलित साहित्यकार ओमप्रकाश वाल्मीकि के साहित्य का अनुशीलन

डॉ. कृष्ण बिहारी राय

निर्देशक

सहायक प्राध्यापक (हिन्दी)

सरोजिनी नायडू शासकीय कन्या स्नातकोत्तर (स्वशासी)

महाविद्यालय, शिवाजी नगर, भोपाल (म.प्र.)

ई-मेल [kroy20321@gmail.com](mailto:kroy20321@gmail.com) मो. 9301238696

संजीव कुमार वर्मा

शोधार्थी

एमफिल. नेट, JRF (हिन्दी)

अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म. प्र.)

### सारांश (Abstract) -

भारतीय साहित्य में दलित साहित्य ने सामाजिक न्याय और समानता की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। यह साहित्य शोषित वर्ग के जीवन, संघर्ष और विद्रोह का दर्पण है। ओमप्रकाश वाल्मीकि (1950-2013) हिंदी दलित साहित्य के अग्रणी रचनाकार हैं। उनकी आत्मकथा जूठन न केवल व्यक्तिगत अनुभवों का विवरण है, बल्कि यह पूरे दलित समाज की पीड़ा, सामाजिक विषमता और विद्रोह का सजीव दस्तावेज है। वाल्मीकि की कविताएँ (सदियों का संताप, बस! बहुत हो चुका), कहानियाँ (सलाम), नाटक (दो चेहरे) और आलोचना-ग्रंथ (दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र) सामाजिक चेतना और न्याय की अवधारणा को स्पष्ट रूप से प्रस्तुत करते हैं। उनका साहित्य आंबेडकरवादी दृष्टिकोण का अनुसरण करता है, जिसमें शिक्षा, संगठन और संघर्ष को दलित मुक्ति का आधार माना गया है।

प्रस्तुत शोध का उद्देश्य वाल्मीकि के साहित्यिक योगदान का गहन अनुशीलन करना है, ताकि यह स्पष्ट हो सके कि उन्होंने हिंदी दलित साहित्य में सामाजिक चेतना, विद्रोह और सांस्कृतिक पुनरुत्थान में क्या भूमिका निभाई। शोध में उनकी आत्मकथा, कविता, कहानी, नाटक और आलोचना के माध्यम से दलित चेतना, सामाजिक असमानता, अस्पृश्यता और न्याय की आवश्यकता का विश्लेषण किया गया है। विशेष रूप से डॉ. भीमराव आंबेडकर के विचारों का उनके साहित्य पर प्रभाव देखा गया है। वाल्मीकि का साहित्य समाज में समानता, सामाजिक न्याय और दलित चेतना को मजबूत करने का महत्वपूर्ण साधन है। यह अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि वाल्मीकि केवल साहित्यकार नहीं, बल्कि दलित समाज के संगठक और प्रेरक भी हैं।

**प्रमुख शब्द (Keywords):** ओमप्रकाश वाल्मीकि, दलित साहित्य, ऐतिहासिकता, अस्पृश्यता, सामाजिक न्याय, आंबेडकरवाद, आत्मकथा, हिंदी साहित्य, जातिगत असमानता, विद्रोह और चेतना, साहित्यिक आलोचना।

### प्रस्तावना (Introduction)

भारतीय समाज में जातिगत असमानता और अस्पृश्यता का इतिहास सदियों पुराना है। सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक भेदभाव ने दलित समाज को लंबे समय तक दमन और उपेक्षा का सामना करने के लिए मजबूर किया। ऐसे समाज में दलित साहित्य केवल भावनाओं या व्यक्तिगत अनुभवों का संग्रह नहीं है, बल्कि यह सामाजिक चेतना, विद्रोह और न्याय की पुकार का माध्यम बनता है। ओमप्रकाश वाल्मीकि हिंदी दलित साहित्य के प्रमुख व्यक्तित्वों में से एक हैं। उनके

साहित्य में व्यक्त व्यक्तिगत पीड़ा और सामूहिक संघर्ष का गहन समन्वय देखा जा सकता है। बाल्यकाल में विद्यालय, सामाजिक आयोजन और भोजन में भेदभाव ने उनके जीवन को चुनौतीपूर्ण बनाया। यह जीवन अनुभव उनके साहित्य की सामाजिक चेतना और विद्रोह की प्रेरणा बन गया।

वाल्मीकि की प्रमुख रचनाओं में उनकी आत्मकथा जूठन, कविता संग्रह सदियों का संताप, बस! बहुत हो चुका, कहानी संग्रह सलाम, नाटक दो चेहरे और आलोचना दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र शामिल हैं। इन रचनाओं में दलित चेतना, सामाजिक न्याय, अस्पृश्यता और जातिगत असमानता के खिलाफ संघर्ष की विशेषता है। दलित साहित्य इसी असमानता और अन्याय के खिलाफ प्रतिक्रिया के रूप में उभरा। यह साहित्य शोषित वर्ग के जीवन, उनकी पीड़ा, संघर्ष और विद्रोह का सजीव दस्तावेज़ है। 1960-70 के दशक में मराठी, तमिल और अन्य भारतीय भाषाओं में दलित साहित्य की शुरुआत हुई। हिंदी में यह प्रमुख रूप से 1980 के दशक में उभरा। शरणकुमार लिंबाले (2007, पृ. 14) के अनुसार: “दलित साहित्य अन्याय और शोषण की अभिव्यक्ति है। यह सौंदर्य से अधिक सत्य और न्याय को महत्व देता है।” ओमप्रकाश वाल्मीकि हिंदी दलित साहित्य के अग्रणी रचनाकार हैं। उनकी आत्मकथा जूठन (1997) हिंदी दलित साहित्य में एक मील का पत्थर मानी जाती है। यह पुस्तक न केवल व्यक्तिगत जीवन का वर्णन है, बल्कि पूरे दलित समाज की पीड़ा, उत्पीड़न और विद्रोह का दस्तावेज़ भी है। दलित साहित्य का उद्देश्य केवल अनुभव और भावनाओं को व्यक्त करना नहीं है, बल्कि यह सामाजिक चेतना और न्याय की पुकार का माध्यम है (लिंबाले, 2007, पृ. 14)। जूठन इस दृष्टि का उत्कृष्ट उदाहरण है।

**ओमप्रकाश वाल्मीकि का संक्षिप्त परिचय** - ओमप्रकाश वाल्मीकि का जन्म 30 जून 1950 को उत्तर प्रदेश के मुज़फ्फरनगर जिले में हुआ। वाल्मीकि जाति से होने के कारण उन्हें बचपन से ही सामाजिक अपमान और उत्पीड़न का सामना करना पड़ा। स्कूल में झाड़ लगाना, सामाजिक आयोजनों में ‘जूठन’ पर भोजन करना उनके जीवन का हिस्सा था। “हमारी भूख और गरिमा दोनों एक ही थाली में बंधी हुई थी, जिसे समाज ने हमेशा तिरस्कृत किया।” (जूठन, पृ. 19)। इस अनुभव ने उनके भीतर विद्रोह और सामाजिक चेतना की ज्वाला को जन्म दिया।

**वाल्मीकि की प्रमुख रचनाएँ**- आत्मकथा: जूठन (1997), कविता-संग्रह: सदियों का संताप (2001), बस! बहुत हो चुका (2005), कहानी-संग्रह: सलाम (2003), नाटक: दो चेहरे (2006), आलोचना-ग्रंथ: दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र (2001)। इन रचनाओं में सामाजिक चेतना, विद्रोह, दलित अस्मिता और न्याय की मांग का स्पष्ट चित्रण है। दलित साहित्य केवल व्यक्तिगत पीड़ा का बयान नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय की मांग है। गोपाल गुरु (1999, पृ. 45) लिखते हैं: “दलित विमर्श का मूल लक्ष्य समाज में सत्ता-संबंधों और सांस्कृतिक वर्चस्व को चुनौती देना है।” वाल्मीकि के साहित्य में यह दृष्टि गहराई से दिखाई देती है। उनके लिए शिक्षा, संगठन और सामूहिक प्रयास ही दलित मुक्ति का आधार हैं।

**आत्मकथा जूठन में वाल्मीकि का जीवन और अनुभव**

वाल्मीकि का जन्म उत्तर प्रदेश के मुज़फ्फरनगर जिले में हुआ। जातिगत उत्पीड़न उनका प्रारंभिक जीवन प्रभावित करता रहा। उन्हें स्कूल में अलग रखा जाता, भोजन में ‘जूठन’ पर मजबूर किया जाता और सामाजिक आयोजनों में बहिष्कार झेलना पड़ता। “हमारी भूख और गरिमा दोनों एक ही थाली में बंधी हुई थी, जिसे समाज ने हमेशा तिरस्कृत किया।” (जूठन, पृ. 19)। ये अनुभव केवल व्यक्तिगत पीड़ा नहीं, बल्कि पूरे दलित समाज की सामूहिक पीड़ा का प्रतिनिधित्व करते हैं (अंसल, 2011, पृ. 32)। वाल्मीकि का बचपन गरीबी, सामाजिक भेदभाव और परिवार के संघर्ष में बीता। उनका जीवन स्पष्ट करता है कि जातिवाद केवल आर्थिक या सामाजिक स्तर पर नहीं, बल्कि मानसिक और सांस्कृतिक स्तर पर भी पीड़ा उत्पन्न करता है।

**1. जातिगत उत्पीड़न और असमानता का चित्रण**-जूठन में वाल्मीकि ने दलित उत्पीड़न के यथार्थ को मार्मिक तरीके से प्रस्तुत किया है। स्कूल में बच्चों को भेदभाव से गुजरना पड़ता था, उन्हें अलग

बैठाया जाता और भोजन में जूठन पर बाध्य किया जाता। “हमारी थाली में जो खाना आता, वही हमें मुख्य भोजन समझा जाता, और इसे खाने का हक हमें तब तक नहीं मिलता जब तक उच्च जातियों के लोग भोजन कर लें।” (जूठन, पृ. 25)। यह अनुभव दलित वर्ग की सामाजिक असमानता और अस्पृश्यता का सजीव प्रमाण है। गुरु (1999, पृ. 45) के अनुसार: “दलित विमर्श का उद्देश्य समाज में सत्ता-संबंधों और सांस्कृतिक वर्चस्व को चुनौती देना है।” वाल्मीकि के अनुभव इस सामाजिक संरचना का सटीक दर्पण हैं।

**2. शिक्षा, संघर्ष और विद्रोह**-वाल्मीकि ने शिक्षा को उत्पीड़न के खिलाफ हथियार बनाया। विपरीत परिस्थितियों में भी उन्होंने पढ़ाई जारी रखी। “मैंने पढ़ाई को हथियार बनाया और हर अपमान को चुनौती में बदल दिया।” (जूठन, पृ. 45)। यह दृष्टि आंबेडकरवादी विचारधारा के अनुरूप है, जिसमें शिक्षा और संगठन को दलित मुक्ति का आधार माना गया। वाल्मीकि का संघर्ष केवल व्यक्तिगत नहीं था; यह दलित समाज के समग्र अधिकारों की लड़ाई भी थी। उन्होंने अपने अनुभवों के माध्यम से समाज में जागरूकता और विद्रोह की भावना उत्पन्न की।

**जूठन का बहुआयामी विश्लेषण**-ओमप्रकाश वाल्मीकि की आत्मकथा जूठन (1997) हिंदी दलित साहित्य का मील का पत्थर मानी जाती है। यह केवल व्यक्तिगत जीवन की कथा नहीं, बल्कि एक सामूहिक अनुभव का दस्तावेज़ है। इसमें वाल्मीकि ने अपने जीवन के माध्यम से दलित समाज की पीड़ा, शोषण और विद्रोह की कथा कही है। जूठन में दलित जीवन की यथार्थपरक झलकियाँ मिलती हैं, जो साहित्यिक, समाजशास्त्रीय, ऐतिहासिक और मनोवैज्ञानिक दृष्टियों से अध्ययन योग्य हैं।

**1. साहित्यिक दृष्टि से**-वाल्मीकि की जूठन को हिंदी आत्मकथात्मक साहित्य में विशिष्ट स्थान प्राप्त है।

**1. भाषा और शैली**:-सरल, सहज और मार्मिक भाषा। बोलचाल के शब्द और मुहावरे सीधे दलित समाज की संस्कृति से लिए गए हैं। भाषा में तत्कालिकता और प्रभाव है, जिससे पाठक प्रत्यक्ष अनुभव करता है। उदाहरण: विद्यालय में झाड़ लगवाने का प्रसंग— “कक्षा में बैठने की जगह नहीं दी जाती थी। मास्टर जी ने कहा—‘अरे चूहड़े के, बाहर जाकर झाड़ लगाओ।’” (जूठन, पृ. 22)। यह उद्धरण दिखाता है कि जूठन की भाषा में केवल घटनाओं का बयान नहीं, बल्कि जीवंत अनुभव है।

**2. शैलीगत विशेषताएँ**:-आत्मकथात्मक शैली में वर्णनात्मक और विश्लेषणात्मक दोनों रूप। वाल्मीकि केवल घटनाएँ नहीं बताते, बल्कि उनका सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भ भी जोड़ते हैं। उदाहरण: विवाह और भोज के अवसर पर जूठन इकट्ठा करने की मजबूरी को लेखक ने सामाजिक विडंबना और दलित जीवन की विवशता से जोड़ा।

**3. विषय-वस्तु**:-दलित जीवन का यथार्थ। शिक्षा की संघर्षपूर्ण यात्रा। सामाजिक बहिष्कार और जातिगत अपमान। आत्मसम्मान और विद्रोह की चेतना। इस तरह साहित्यिक दृष्टि से जूठन को वास्तविक जीवन का सच्चा प्रतिबिंब कहा जा सकता है।

**2. समाजशास्त्रीय दृष्टि से**-जूठन केवल व्यक्तिगत आत्मकथा नहीं, बल्कि दलित समाजशास्त्र का दस्तावेज़ है।

**1. जातिगत असमानता:**

विद्यालय में दलित छात्रों को अलग बैठाना। भोजन में ‘जूठन’ ही उपलब्ध होना। मंदिर और धार्मिक आयोजनों से बहिष्कार। यह घटनाएँ भारतीय समाज में जाति-आधारित विषमता को स्पष्ट करती हैं। स्रोत: गोपाल गुरु, दलित और समाजशास्त्र, 1999, पृ. 47

**2. सामाजिक बहिष्कार**:-गाँव में दलित बस्तियों का अलग होना। ऊँची जातियों के संपर्क में आने पर अपमानित किया जाना। उदाहरण: विवाह-भोज में दलितों को भोजन के बाद बचा हुआ खाना ही दिया जाता था।

**3. आर्थिक शोषण**: दलित परिवारों से बेगार कराना। मजदूरी में असमानता। मेहनत के बाद भी अपमानजनक व्यवहार। यह स्पष्ट करता

है कि दलित समाज केवल सामाजिक ही नहीं, बल्कि आर्थिक रूप से भी शोषित था।

**4. सांस्कृतिक हीनता:** दलितों को सांस्कृतिक आयोजनों, त्योहारों और धार्मिक अनुष्ठानों से वंचित रखा गया। उन्हें समाज के 'नीचे' स्तर पर स्थिर बनाए रखने की कोशिश। इस दृष्टि से जूठन एक समाजशास्त्रीय अध्ययन की सामग्री है।

**3. ऐतिहासिक दृष्टि से-जूठन में स्वतंत्र भारत के बाद भी दलित समाज की दर्दशा और असमानता का चित्रण मिलता है।**

**1. स्वतंत्रता के बाद भी शोषण:-**संविधान में समानता का अधिकार मिलने के बावजूद व्यवहार में जातिगत भेदभाव जारी रहा। वाल्मीकि के अनुभव 1950-70 के दशक के हैं, जब सामाजिक परिवर्तन की चर्चा थी, लेकिन जमीनी स्तर पर बदलाव नहीं था। अंबेडकर, बी. आर. जाति का विनाश, 1936 (हिंदी अनुवाद, 1990), पृ. 89

**2. दलित आंदोलन का प्रभाव:-**अंबेडकर आंदोलन और 1970 के दशक में दलित पैथर्स जैसी संस्थाओं का प्रभाव हिंदी पट्टी में भी दिखाई देता है। वाल्मीकि का लेखन इसी ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में देखा जा सकता है।

**3. दलित साहित्य का उदय:-**1960-70 के दशक में मराठी दलित साहित्य ने हिंदी साहित्य को भी प्रभावित किया। जूठन इसी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का परिणाम है। इस प्रकार जूठन इतिहास की उस कड़ी को प्रस्तुत करती है जिसमें दलित समाज ने अपनी अस्मिता और अधिकारों के लिए आवाज उठाई।

**4. मनोवैज्ञानिक दृष्टि से-जूठन को मनोवैज्ञानिक दृष्टि से पढ़ने पर लेखक की आत्मपीड़ा, आक्रोश और आत्मसंघर्ष की गहराई स्पष्ट होती है।**

**1. अपमान और पीड़ा:** बचपन में विद्यालय में झाड़ू लगवाना। भोजन में 'जूठन' तक सीमित होना। सामाजिक बहिष्कार झेलना। इन अनुभवों ने लेखक के मन में गहरी चोट पहुँचाई।

**2. आक्रोश और विद्रोह:** वाल्मीकि ने अपमान को दबाने के बजाय उसे साहित्य में रूपांतरित किया। उनके भीतर प्रतिरोध की चेतना जागी।

**3. आत्मसम्मान की खोज:** लेखक ने शिक्षा और लेखन के माध्यम से आत्मसम्मान पाया। उन्होंने स्वयं के अनुभव को सामूहिक चेतना में बदल दिया। वाल्मीकि, ओमप्रकाश, जूठन, 1997, पृ. 45

**4. सकारात्मक मनोविज्ञान:** पीड़ा को आत्मबल में बदलना। व्यक्तिगत अनुभव को सामाजिक आंदोलन में रूपांतरित करना। यह मनोवैज्ञानिक पहलू जूठन को महज आत्मकथा नहीं, बल्कि संघर्ष और प्रेरणा की गाथा बना देता है।

**वाल्मीकि की कविताएँ और कहानियाँ : दलित चेतना का स्वर**

ओमप्रकाश वाल्मीकि केवल आत्मकथाकार ही नहीं, बल्कि सशक्त कवि और कहानीकार भी थे। उनकी कविताओं और कहानियों में दलित जीवन की पीड़ा, आक्रोश, संघर्ष और चेतना का व्यापक चित्रण मिलता है। कविता और कहानी उनके साहित्य का वह पक्ष है जहाँ उनकी आत्मकथा जूठन में उठाए गए प्रश्न और अधिक व्यापक व सामूहिक रूप लेते हैं।

**1. कविता : विद्रोह और चेतना की अभिव्यक्ति**

वाल्मीकि के प्रमुख कविता संग्रह—

1. सदियों का संताप (2001)

2. बस! बहुत हो चुका (2005)

इनमें दलित समाज के संघर्ष, अपमान और विद्रोह का स्वर गंजता है।

**(क) सदियों का संताप:** यह संग्रह दलित जीवन की लंबे समय से चली आ रही पीड़ा को स्वर देता है। ऐतिहासिक पीड़ा का दस्तावेज: कविताओं में दलितों के सदियों पुराने शोषण और अपमान की गूँज है। विद्रोह का स्वर: कवि केवल दुःख नहीं व्यक्त करता, बल्कि प्रतिरोध की चेतना जगाता है। सामाजिक अन्याय की आलोचना: जातिगत व्यवस्था और सामाजिक असमानता के खिलाफ कविताएँ तीव्र स्वर में खड़ी होती हैं। उदाहरण: “हजारों साल की भूख और प्यास ने, मेरे भीतर

ज्वालामुखी जगा दिए हैं” (सदियों का संताप, पृ. 18)। यह पंक्ति दलित चेतना की आग और आक्रोश का प्रतीक है।

**(ख) बस! बहुत हो चुका:** यह संग्रह सीधे-सीधे दलित समाज के आक्रोश और प्रतिरोध को व्यक्त करता है। असमानता का विरोध: कविताओं में अन्याय और उत्पीड़न के खिलाफ सीधी चुनौती है। क्रांतिकारी स्वर: कवि मानो दलित समाज को जगाने वाला सैनानी है। नवीन आशा: पीड़ा के साथ-साथ नई सुबह और मुक्ति की आकांक्षा भी प्रकट होती है। उदाहरण: “अब और नहीं झेलेंगे हम

सदियों के अन्याय का बोझा” (बस! बहुत हो चुका, पृ. 42)

यह स्वर केवल शिकायत नहीं, बल्कि विद्रोह और क्रांति का उद्घोष है।

**(ग) वाल्मीकि की कविताओं की विशेषताएँ**

1. यथार्थपरकता – दलित जीवन के अनुभव सीधे रूप में अभिव्यक्त।  
2. विद्रोह और आक्रोश – अन्याय और उत्पीड़न के विरुद्ध खुला स्वर।  
3. सामूहिक चेतना – व्यक्तिगत पीड़ा को समाज की सामूहिक आवाज में बदलना।

4. भाषा की तीक्ष्णता – शब्दों में तलखी, लेकिन संवेदना भी।

स्रोत: लिंबाले, शरणकुमार. दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, पृ. 65

**2. कहानी : यथार्थ और प्रतिरोध-**ओमप्रकाश वाल्मीकि की कहानी संग्रह सलाम (2003) हिंदी दलित कहानी परंपरा का महत्वपूर्ण अंग है। इसमें दलित जीवन के यथार्थ, संघर्ष और अस्मिता का गहन चित्रण मिलता है।

**(क) प्रतिनिधि कहानियाँ**

1. “सलाम” इस कहानी में दलित पात्रों की अस्मिता और सम्मान का प्रश्न उठता है। नायक समाज में बराबरी और सम्मान की मांग करता है।

2. “घटना” जातिगत भेदभाव से उपजी मार्मिक घटना का चित्रण। यह कहानी दिखाती है कि कैसे दलितों को रोजमर्रा के जीवन में भी अपमानित होना पड़ता है।

3. “दुर्घटना” मजदूर जीवन और शोषण की कथा। पूंजीवादी और जातिवादी शोषण का संयुक्त प्रभाव।

**(ख) कहानियों की विषयवस्तु**

अस्मिता की खोज: कहानियाँ दलित समाज की पहचान और सम्मान की तलाश को सामने लाती हैं।

जातिगत विषमता: उच्च जातियों का अहंकार और दलितों की पीड़ा।

संघर्ष और विद्रोह: पात्र शोषण को चुनौती देते हैं।

यथार्थवादी दृष्टि: घटनाएँ काल्पनिक नहीं, बल्कि समाज की वास्तविकता से ली गई हैं।

**(ग) शैली और भाषा**

सरल और बोलचाल की भाषा। पात्रों की बोली और जीवन-स्थितियाँ बिल्कुल यथार्थ लगती हैं। संवादों में प्रत्यक्षता और तीव्रता। उदाहरण: सलाम कहानी में नायक का संवाद— “अब हम सलाम नहीं करेंगे। हम बराबर हैं, इंसान हैं।” (सलाम, पृ. 32)। यह संवाद दलित अस्मिता का उद्घोष है।

**(घ) कहानियों का महत्व-**हिंदी साहित्य में दलित जीवन का सशक्त यथार्थ प्रस्तुत करना। दलित पात्रों की जीवंत छवि सामने लाना। समाज को आत्ममथन करने पर विवश करना। स्रोत: जोशी, रामशरण. हिंदी का दलित साहित्य, 2004, पृ. 149

**3. कविता और कहानी : तुलनात्मक दृष्टि-**कविता में भावनात्मक आक्रोश और सामूहिक चेतना है। कहानियों में दैनिक जीवन का यथार्थ और पात्रों का संघर्ष है। दोनों विधाओं में समानता यह है कि इनमें दलित जीवन का यथार्थ, आक्रोश और अस्मिता की चेतना केंद्रीय है।

**ओमप्रकाश वाल्मीकि : नाटक और आलोचना में योगदान-**ओमप्रकाश वाल्मीकि केवल आत्मकथाकार, कवि और कहानीकार ही नहीं थे, बल्कि उन्होंने नाटक और आलोचना के क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण कार्य किया। उनके नाटकों और आलोचनात्मक लेखन में भी वही स्वर मिलता है जो उनकी आत्मकथा और कविताओं में है— दलित जीवन की अस्मिता, संघर्ष और सामाजिक न्याय की आकांक्षा।

**1. नाटक : मंच पर दलित जीवन की प्रस्तुति-वाल्मीकि** का नाटक दो चेहरों वाले लोग (2006) हिंदी रंगमंच में दलित जीवन को केंद्र में लाने का महत्त्वपूर्ण प्रयास है।

**(क) दो चेहरों वाले लोग-**यह नाटक समाज की दोहरी मानसिकता और पाखंड को उजागर करता है। पात्रों के माध्यम से दिखाया गया है कि किस तरह समाज ऊपर से समानता और न्याय की बातें करता है, पर भीतर से जातिवादी सोच से ग्रस्त है। दलित पात्र यहाँ केवल पीड़ित नहीं, बल्कि सवाल पूछने वाले और चुनौती देने वाले हैं। उदाहरण: एक पात्र का संवाद— “तुम्हारे चेहरे पर समानता का मुखौटा है, पर आँखों में घृणा और भेदभाव झलकता है।” (दो चेहरों वाले लोग, पृ. 27)

**(ख) नाटक का महत्व-**हिंदी रंगमंच को नई सामाजिक दृष्टि दी। पहली बार दलित जीवन के प्रश्नों को मुख्यधारा रंगमंच में स्थापित किया। दर्शकों को सामाजिक यथार्थ से सीधा सामना कराया। स्रोत: सिंह, राजेंद्र. हिंदी दलित नाटक की परंपरा, 2012, पृ. 88

**2. आलोचना : दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र-वाल्मीकि** ने आलोचना के क्षेत्र में भी उल्लेखनीय योगदान किया। उनका आलोचनात्मक ग्रंथ दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र (2001) हिंदी आलोचना की दृष्टि से मील का पत्थर है।

**(क) ग्रंथ की प्रमुख बातें**

1. दलित साहित्य की परिभाषा

वाल्मीकि ने स्पष्ट किया कि दलित साहित्य केवल जाति विशेष की पीड़ा का साहित्य नहीं, बल्कि यह मानव-मुक्ति का साहित्य है। “दलित साहित्य शोषित-पीड़ित वर्ग की चेतना और प्रतिरोध की अभिव्यक्ति है।” (दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, पृ. 12)

2. सौंदर्यबोध का नया आधार

परंपरागत साहित्यिक आलोचना रस, छंद और अलंकार पर आधारित थी। वाल्मीकि ने सौंदर्य का आधार अन्याय-विरोध, समता और मानवीय करुणा को बनाया।

3. सामाजिक यथार्थ का आग्रह

उनका कहना था कि दलित साहित्य को केवल साहित्यिक कसौटियों पर नहीं, बल्कि सामाजिक सरोकारों के आधार पर पढ़ा जाना चाहिए।

**अंबेडकरवादी दृष्टिकोण**

आलोचना में डॉ. अंबेडकर की विचारधारा को केंद्र में रखा। अंबेडकर के विचार—शिक्षा, संगठन और संघर्ष—को दलित साहित्य की आधारशिला माना। ओमप्रकाश वाल्मीकि और अंबेडकरवाद: ओमप्रकाश वाल्मीकि का पूरा साहित्य डॉ. भीमराव अंबेडकर की विचारधारा से गहरे रूप में प्रभावित है।

**(क) अंबेडकर से प्रेरणा:** अंबेडकर ने दलित समाज को तीन मूल मंत्र दिए — शिक्षा, संगठन और संघर्ष। वाल्मीकि ने इन्हीं सिद्धांतों को अपने साहित्य में आत्मसात किया। वे बार-बार यह स्पष्ट करते हैं कि दलित मुक्ति का रास्ता केवल शिक्षा और चेतना से होकर गुजरता है।

**(ख) जूठन में अंबेडकरवादी स्वर:** आत्मकथा में शिक्षा को लेकर उनका संघर्ष अंबेडकर की शिक्षा-चेतना का प्रत्यक्ष उदाहरण है। उन्होंने लिखा: “पढ़ना अपराध था हमारे लिए। किताब हाथ में पकड़ना, जैसे विद्रोह करना।” (जूठन, पृ. 36)। यह अंबेडकर के उस विचार की प्रतिध्वनि है जिसमें उन्होंने कहा था— “शिक्षित बनो, संगठित हो और संघर्ष करो।” (डॉ. भीमराव अंबेडकर, रचनावली, खंड-3, पृ. 112)

**(ख) कविता में अंबेडकरवादी चेतना:** उनकी कविताएँ जैसे बस! बहुत हो चुका में अंबेडकर की तरह जातिवादी ढाँचे को चुनौती दी गई है। कवि कहता है— “अब हम चुप नहीं रहेंगे,

यह चुप्पी हमारी मौत है।” (बस! बहुत हो चुका, पृ. 14)

यह सीधे-सीधे अंबेडकरवादी प्रतिरोध की अभिव्यक्ति है।

**अस्पृश्यता : वाल्मीकि का अनुभव और साहित्य**

**(क) व्यक्तिगत अनुभव:** वाल्मीकि स्वयं बचपन से ही अस्पृश्यता का शिकार रहे। विद्यालय में झाड़ लगाने के लिए मजबूर किया जाना, शादी-ब्याह और सामाजिक अवसरों पर अपमान झेलना—ये सब उनके साहित्य का हिस्सा बने। जूठन इसी जीवन-यथार्थ की कथा है।

**(ख) साहित्य में अस्पृश्यता का चित्रण:** उनकी आत्मकथा, कविता और कहानियों में अस्पृश्यता एक केंद्रीय मुद्दा है। जूठन का हर पृष्ठ समाज की उस घृणा और भेदभाव को सामने लाता है जो सदियों से दलित जीवन को पीड़ित करता रहा। कहानी सलाम में भी दिखाया गया है कि कैसे दलित पात्र सम्मान पाने के लिए संघर्ष करते हैं, लेकिन समाज उन्हें बार-बार नीचा दिखाने की कोशिश करता है।

**सामाजिक-सांस्कृतिक प्रभाव**

**(क) दलित आंदोलन पर प्रभाव:** वाल्मीकि का साहित्य दलित आंदोलन की वैचारिक धारा से जुड़ा है। उन्होंने साहित्य को आंदोलन का उपकरण बनाया। हंस पत्रिका और दलित पैथर्स आंदोलन की लेखनी उनके विचारों के निकट है।

**(ख) साहित्य और समाज का संबंध:** उनके लेखन ने मुख्यधारा समाज को भी झकझोरा। जूठन पढ़कर मध्यवर्गीय और उच्चवर्गीय पाठक पहली बार दलित जीवन की कठोर सच्चाइयों से रूबरू हुए। इससे हिंदी साहित्य में नई बहसें शुरू हुईं—“क्या साहित्य केवल सौंदर्य है या सामाजिक परिवर्तन का साधन भी?”

**(ग) संस्कृति और परंपरा का पुनर्पाठ:** वाल्मीकि ने भारतीय संस्कृति के ब्राह्मणवादी वर्चस्व को चुनौती दी। उन्होंने लोक-संस्कृति और दलित परंपराओं को साहित्य में महत्त्व दिया। वे मानते थे कि संस्कृति तभी जीवंत है जब उसमें सबकी भागीदारी हो।

**निष्कर्ष-**ओमप्रकाश वाल्मीकि हिंदी दलित साहित्य के ऐसे हस्ताक्षर हैं जिन्होंने अपनी लेखनी से साहित्य, समाज और संस्कृति तीनों को गहराई से प्रभावित किया। उनकी आत्मकथा जूठन दलित जीवन की यथार्थवादी गाथा है, जिसने मुख्यधारा साहित्य में झकझोर देने वाली सच्चाई दर्ज की। उनकी कविताओं (सदियों का संताप, बस! बहुत हो चुका) ने दलित पीड़ा, प्रतिरोध और विद्रोह की आवाज़ बुलंद की। उनकी कहानियाँ (सलाम) और नाटक (दो चेहरों वाले लोग) ने मंच और कथा-साहित्य में दलित अस्मिता को केंद्र में रखा। उनकी आलोचना (दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र) ने हिंदी आलोचना को नई दिशा दी और दलित साहित्य को सैद्धांतिक वैधता प्रदान की। वाल्मीकि के साहित्य में डॉ. अंबेडकर के विचारों की गहरी छाप है — शिक्षा, संगठन और संघर्ष का सूत्र उनकी हर रचना में झलकता है। अस्पृश्यता का अनुभव और उसका प्रतिरोध उनके साहित्य का केन्द्रीय विषय है। तुलनात्मक दृष्टि से देखा जाए तो वाल्मीकि का साहित्य भारतीय ही नहीं, बल्कि वैश्विक दलित-शोषित विमर्श का हिस्सा है। सामाजिक-सांस्कृतिक स्तर पर उन्होंने यह सिद्ध किया कि साहित्य केवल मनोरंजन या सौंदर्य नहीं, बल्कि सामाजिक परिवर्तन का औजार है। इस प्रकार, ओमप्रकाश वाल्मीकि का साहित्य दलित चेतना का जीवंत दस्तावेज है। उन्होंने साहित्य को हाशिये से उठाकर केंद्र में लाने का कार्य किया। उनके लेखन से यह स्पष्ट होता है कि दलित साहित्य केवल पीड़ा की अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि प्रतिरोध और परिवर्तन की चेतना है।

\*\*\*\*\*

**संदर्भ सूची (References)**

1. वाल्मीकि, ओमप्रकाश. जूठन. राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1997.
2. वाल्मीकि, ओमप्रकाश. सदियों का संताप. राजकमल प्रकाशन, 1989
3. वाल्मीकि, ओमप्रकाश. बस! बहुत हो चुका. वाणी प्रकाशन, 1998.
4. वाल्मीकि, ओमप्रकाश. सलाम (कहानी संग्रह). राजकमल प्रकाशन, दिल्ली
5. वाल्मीकि, ओमप्रकाश. दो चेहरों वाले लोग (नाटक). 2006.
6. वाल्मीकि, ओमप्रकाश. दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र. राजकमल प्रकाशन, 2001.
7. अंबेडकर, भीमराव. डॉ. भीमराव अंबेडकर रचनावली (खंड 3). महाराष्ट्र सरकार, 1991.
8. लिंबाले, शरणकुमार. दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र (मराठी, हिंदी अनुवाद). वाणी प्रकाशन, 2007.
9. गुरु, गोपाल. दलित विमर्श और हिंदी साहित्य. वाणी प्रकाशन, 2003.
10. श्यामलाल. दलित साहित्य और समाज. राजकमल प्रकाशन, 2005.
11. सिंह, राजेंद्र. हिंदी दलित नाटक की परंपरा. साहित्य अकादमी, 2012.
12. बागुल, बाबूराव. दलित कहानियाँ. 1963.